पालवंश (750–1203 ई.)

[PALAS DYNASTY (750–1203 A.D.)]

8वीं सदी के मध्य में उत्तर-भारत में एक अन्य बड़ा साम्राज्य बंगाल के पाल-शासकों ने स्थापित किया। कन्नौज को प्राप्त करने के लिए पाल-शासकों ने प्रतिहार और राष्ट्रकूट-शासकों से प्रतिद्वन्द्विता की। प्रायः 400 वर्ष तक पाल-शासकों ने बंगाल को शक्ति, समृद्धि और वैभव प्रदान किया। पाल-शासकों के वंश के बारे में निश्चित रूप से कुछ पता नहीं लगता परन्तु उनका मूल निवास-स्थान बंगाल था, यह निश्चित है।

गोपाल (750–770 ई.)

शशांक ने बंगाल में एक शक्तिशाली राज्य स्थापित किया था। परन्तु उसकी मृत्यु के पश्चात् प्रायः एक सदी तक बंगाल में अराजकता रही। एक शक्तिशाली सम्राट के अभाव में उस अराजकता को दूर किया जाना सम्भव न हो सका। ताम्बे के खलीमपुर-अभिलेख से पता लगता है कि ऐसी स्थिति में दुःखी होकर बंगाल के सामन्तों ने जनता की सम्मति से गोपाल को अपना नेता चुना जिसने पाल-वंश के यशस्वी साम्राज्य की नींव डाली। तिब्बती इतिहासकार **तारानाथ** के अनुसार गोपाल पुङ्ग वर्धन (बोगरा जिला) के एक क्षत्रिय परिवार में

पैदा हुआ था। वह बौद्ध धर्म का मानने वाला था और बाद के सभी पाल-वंशीय शासक बौद्ध धर्म में आस्था रखते थे। तिब्बती लामा एवं इतिहासकार तारानाथ के अनुसार गोपाल ने ओदान्तपुर में एक मठ का निर्माण करवाया था। परन्तु धार्मिक प्रवृति का होने के बावजूद गोपाल बड़े साम्राज्य की स्थापना के लिए युद्ध-नीति को स्वीकार करता था।

धर्मपाल (770–810 ई.)

गोपाल का पुत्र धर्मपाल एक यशस्वी सम्राट हुआ जिसने बंगाल के नागरिकों की भावना और त्याग को ठीक प्रकार से समझकर उनका प्रतिनिधित्व किया और बंगाल के राज्य को उत्तर-भारत के एक श्रेष्ठ साम्राज्य में परिवर्तित कर दिया। जिस समय वह सिंहासन पर बैठा था उस समय मालवा और राजपूताना के प्रतिहार-शासक कन्नौज को प्राप्त करने के लिए उत्सुक थे और उसी समय दक्षिण-भारत के राष्ट्रकूट-शासक भी उत्तर-भारत के वैभव पर आँख लगाये हुए थे। जब धर्मपाल ने पश्चिम की ओर अपने राज्य के विस्तार का प्रयत्न किया तो उसका संघर्ष प्रतिहार और राष्ट्रकूटों से हुआ। इस संघर्ष में प्रतिहार-शासक उसके प्रमुख शत्रु सिद्ध हुए। सर्वप्रथम, धर्मपाल का प्रतिहार-शासक वत्सराज से गंगा-यमुना के दोआब में एक युद्ध हुआ। इस युद्ध में धर्मपाल की पराजय हुई। परन्तु इससे पहले कि वत्सराज अपनी विजय का पूरा लाभ उठा पाता, राष्ट्रकूट-सम्राट ध्रुव ने उत्तर-भारत पर आक्रमण किया और वत्सराज को परास्त करके राजपूताना में शरण लेने के लिए बाध्य किया। ध्रुव ने दोआब में बढ़कर धर्मपाल को भी परास्त किया परन्तु उसके शीघ्र वापस चले जाने के कारण धर्मपाल को विशेष हानि नहीं हुई।

ध्रुव के आक्रमण ने धर्मपाल को हानि के स्थान पर लाभ पहुँचाया। प्रतिहारों की शक्ति के दुर्बल हो जाने से धर्मपाल को उत्तर-भारत में अपनी शक्ति को दृढ़ करने का अवसर मिला। धर्मपाल ने उत्तर-भारत में एक बड़ा साम्राज्य स्थापित कर लिया, कन्नौज के सिंहासन से इन्द्रायुध को हटाकर चक्रायुध को बैठाया और उस अवसर पर कन्नौज में एक बड़ा दरबार किया। यद्यपि धर्मपाल के युद्धों के बारे में ठीक-ठीक पता नहीं चलता परन्तु जो भी ज्ञात हुआ है उससे स्पष्ट है कि बंगाल और बिहार उसकी प्रत्यक्ष अधीनता में थे, कन्नौज का राज्य उसके अधीन था, जिसमें आधुनिक उत्तर प्रदेश भी सम्मिलित था, और पंजाब, पश्चिमी पहाड़ी भाग, राजपूताना, मालवा और बरार के अनेक शासक उसके आधिपत्य को स्वीकार करते थे।

परन्तु धर्मपाल का विरोध वत्सराज के उत्तराधिकारी नागभट्ट द्वितीय ने किया। नागभट्ट के नेतृत्व में प्रतिहारों ने अपनी खोयी हुई प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित किया और कन्नौज से चक्रायुध को निकाल दिया। चक्रायुध धर्मपाल के अधीन था। इस कारण धर्मपाल का नागभट्ट से युद्ध करना आवश्यक हो गया। मुंगेर (बिहार) के निकट नागभट्ट और धर्मपाल का युद्ध हुआ जिसमें धर्मपाल की पराजय हुई। परन्तु एक बार फिर राष्ट्रकूट-शासकों का उत्तर-भारत की राजनीति में हस्तक्षेप प्रभावपूर्ण सिद्ध हुआ। राष्ट्रकूट-शासक गोविन्द तृतीय ने उत्तर-भारत पर आक्रमण किया। चक्रायुध और धर्मपाल ने बिना युद्ध किये ही उसके आधिपत्य को स्वीकार कर लिया जिससे यह भी प्रतीत होता है कि सम्भवतया उन दोनों ने नागभट्ट के विरुद्ध गोविन्द से सहायता माँगी थी। गोविन्द ने नागभट्ट को परास्त करके प्रतिहारों की शक्ति को सीमित करने में सफलता पायी। धर्मपाल ने इससे लाभ उठाया और ऐसा प्रतीत होता है कि उसने उत्तर-भारत में अपनी श्रेष्ठता को पुनः स्थापित कर लिया। अपनी मृत्यु के अवसर पर उसने अपने पुत्र देवपाल को एक विस्तृत साम्राज्य सौंपा।

धर्मपाल एक योग्य सम्राट था। निस्सन्देह, बंगाल के नागरिकों का त्याग और उसके सामन्तों द्वारा स्वयं के अधिकारों को विनष्ट करके एक राजा का चुनाव करना बंगाल की महानता का कारण बना। परन्तु इस महानता में धर्मपाल का बहुत बड़ा योगदान था। वह एक कुशल कूटनीतिज्ञ और साहसी योद्धा था। उसने अनेक युद्ध लड़े, विभिन्न कठिन परिस्थितियों का मुकाबला किया, प्रतिहारों के विरुद्ध राष्ट्रकूटों की शक्ति का प्रयोग करके उससे पूर्ण लाभ उठाया और अन्त में सफलता से अपने शासन का अन्त किया। उसने **परमेश्वर, परमभट्टारक** और **महाराजाधिराज** की उपाधियाँ ग्रहण कीं और बंगाल को उत्तर-भारत की राजनीति में महत्वपूर्ण बना दिया। यह आकस्मिक नहीं है कि ग्यारहवीं शताब्दी के गुजराती कवि सोड्ठल ने धर्मपाल को 'उत्तरापथ स्वामिन' कहा है किन्तु इतना होने के बाद भी धर्मपाल की यह सफलता दीर्घकालीन साबित नहीं हुई। **डॉ. आर. सी. मजूमदार** ने लिखा है : "वह देश (बंगाल) जो आन्तरिक कलह के कारण बुरी तरह से विभाजित था और जिसे एक सदी से भी अधिक समय से विदेशी आक्रमणकारियों ने निरन्तर पददलित किया था, उसके द्वारा एक ऐसे शक्तिशाली और संगठित राज्य की श्रेणी में उठा दिया गया जिसका स्वामित्व उत्तर-भारत के बहुत बड़े भाग पर था। अन्ततोगत्वा, एक महान् गौड़-साम्राज्य की स्थापना का शशांक का स्वप्न पूरा हुआ।"[1] इसके अतिरिक्त, धर्मपाल धर्म, साहित्य और ललित-कलाओं का संरक्षक था। उसने मगध में गंगा नदी के तट पर विक्रमशिला के बौद्ध-विहार को स्थापित किया जो बौद्ध शिक्षा का महान् केन्द्र-स्थल बना। उसने नालन्दा विश्वविद्यालय के व्यय के लिए 200 गाँवों को दान में दिया था। राजशाही जिले में उसने एक अन्य बड़े बौद्ध-विहार की स्थापना भी की थी। नेपाल के ग्रन्थों में धर्मपाल की गौरव-गाथा सुरक्षित है।

अपनी वृद्धावस्था में धर्मपाल ने एक राष्ट्रकूट राजकुमारी से विवाह किया जिसका उद्देश्य निश्चय ही राजनीतिक रहा होगा। उसी से उसके पुत्र और उत्तराधिकारी देवपाल का जन्म हुआ।

देवपाल (810–850 ई.)

देवपाल योग्य पिता का योग्य पुत्र सिद्ध हुआ। उसने न केवल अपने पिता से प्राप्त साम्राज्य को सुरक्षित रखा अपितु उसका विस्तार भी किया। देवपाल के भी मुख्य प्रतिद्वन्द्वी प्रतिहार-शासक सिद्ध हुए। नागभट्ट द्वितीय ने पूर्व में बढ़कर कन्नौज तक अपना अधिकार कर लिया था। देवपाल ने उसे पीछे हटने के लिए बाध्य किया और उसी अवसर पर उसने उत्तर-भारत की विजय-यात्रा की। यह कहा गया है कि उसने हिमालय से लेकर विन्ध्याचल पर्वत तक आक्रमण किये और सफलता पायी। उसने उत्तर-पश्चिम में कम्बोज और पंजाब तक आक्रमण किये, पूर्व में उसने असम को जीता, उत्कल को भी उसने विजय किया, प्रतिहार-शासक नागभट्ट की सीमाओं पर उसने आक्रमण किया और, सम्भवतया, दक्षिण में राष्ट्रकूट अथवा पाण्ड्य-शासकों से युद्ध किये। प्रतिहार-शासक मिहिरभोज से भी उसका युद्ध हुआ जिसमें मिहिरभोज पराजित हुआ। इस प्रकार देवपाल का सैनिक-जीवन सफल रहा।

---

1 "The country, which was hopelessly divided by internal dissensions and trampled upon by a succession of foreign invaders for more than a century, was raised by him to the position of a strong integrated state exercising imperial sway over a considerable part of Northern India. Sasanka's dream of founding a great Gauda empire at last fulfilled."
—Dr. R. C. Majumdar : *The Age of Imperial Kannauj.*

निस्सन्देह, उसका प्रत्यक्ष शासन बंगाल और बिहार तक ही सीमित था परन्तु उत्तर-भारत के अनेक शासक उसके आधिपत्य को स्वीकार करते थे। इस क्षेत्र में उसके एकमात्र प्रतिद्वन्द्वी प्रतिहार-शासक थे जो उसके विरुद्ध सफलता न पा सके। देवपाल की मृत्यु के पश्चात् ही मिहिरभोज कन्नौज तथा उत्तर-भारत में प्रतिहारों की शक्ति और प्रतिष्ठा को स्थापित करने में सफल हो सका। देवपाल ने भारतीय राजनीति में एक प्रमुख स्थान प्राप्त किया और उसकी ख्याति विदेशों में भी फैली। दक्षिण-पूर्वी एशिया के शैलेन्द्र-साम्राज्य के शासक ने उसे नालन्दा-विद्यालय को पाँच गाँव दान देने की माँग की जिसे उसने स्वीकार कर लिया। वह उत्तर-भारत का पहला शासक था जिसने सम्भवतया सुदूर-दक्षिण के पाण्ड्य-शासकों के विरुद्ध दक्षिण के अन्य राज्यों को सैनिक सहायता दी।

देवपाल ने प्राय: 40 वर्ष शासन किया। उसने मुंगेर को अपनी राजधानी बनाया था। अपनी सैनिक सफलताओं के अतिरिक्त उसने बौद्ध धर्म, साहित्य और कला को संरक्षण दिया। अरब-यात्री सुलेमान ने उसे प्रतिहार और राष्ट्रकूट-शासकों से अधिक शक्तिशाली माना है। निस्सन्देह, देवपाल अपने पिता की भाँति ही एक सफल शासक सिद्ध हुआ। उत्तर भारत की तत्कालीन राजनीति में प्रतिष्ठित स्थान प्रदान कराने का श्रेय धर्मपाल तथा देवपाल को ही जाता है। **डॉ. आर. सी. मजूमदार** ने लिखा है : "बंगाल के इतिहास में सबसे अधिक यशस्वी अध्याय धर्मपाल और देवपाल का शासन-काल है। उससे पहले और उसके पश्चात् अंग्रेजों के आने के समय तक बंगाल ने भारतीय राजनीति में इतना अधिक महत्वपूर्ण भाग नहीं लिया।"[1]

पाल साम्राज्य की दुर्बलता का समय (850–988 ई.)

देवपाल के उत्तराधिकारी दुर्बल और शान्तिप्रिय नीति के अनुयायी हुए जिसके कारण उनके समय में पाल-साम्राज्य अवनति की ओर अग्रसर हुआ। देवपाल के पश्चात् विग्रहपाल प्रथम शासक हुआ जिसने बहुत थोड़े समय शासन किया। विग्रहपाल के पुत्र **नारायणपाल** (854-908 ई.) ने शान्तिप्रिय नीति को अपनाया जिसके कारण 860 ई. में राष्ट्रकूटों ने और उसके पश्चात् प्रतिहार-शासकों ने निरन्तर उस पर आक्रमण किये, उसे पराजित किया, उसकी प्रतिष्ठा को नष्ट किया और प्रतिहार-शासक महेन्द्रपाल ने उससे मगध और उत्तरी बंगाल को छीन लिया। उसी के समय में कामरूप और उड़ीसा के राज्य स्वतन्त्र हो गये। इस प्रकार पाल-साम्राज्य छोटा रह गया यद्यपि अपने अन्तिम समय में नारायनपाल ने उत्तरी बंगाल और दक्षिण-बिहार को प्रतिहारों से पुन: छीनने में सफलता पायी। नारायनपाल के पश्चात् क्रमश: राज्यपाल, गोपाल द्वितीय, विग्रहपाल द्वितीय ने लगभग 80 वर्ष शासन किया। ये सभी शासक दुर्बल हुए। उनके समय में चन्देल, कलचुरि और काम्बोज शासकों ने पाल-शासकों पर आक्रमण करके उनके राज्य के विभिन्न भागों पर अधिकार कर लिया तथा पूर्वी एवं दक्षिणी बंगाल में 'चन्द्र-वंश' ने अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया।

महीपाल प्रथम और उसके उत्तराधिकारी : पाल शक्ति का पुनरुत्थान (983–1120 ई.)

विग्रहपाल द्वितीय का उत्तराधिकारी महीपाल प्रथम हुआ जिसने पुन: पाल-वंश की प्रतिष्ठा को स्थापित किया। महीपाल प्रथम ने 983 से 1038 ई. तक शासन किया। उसने

---

1 "The reigns of Dharampala and Devapala constitute the most brilliant chapter in the history of Bengal. Never before, or since, till the advent of the British, did Bengal play such an important role in Indian politics."
—Dr. R. C. Majumdar : *The Age of Imperial Kannauj.*

उत्तरी, पश्चिमी एवं पूर्वी बंगाल को काम्बोज और चन्द्र-शासकों से छीन लिया, सम्पूर्ण बिहार को जीत लिया और सम्भवतया बनारस तक अपने राज्य की सीमाओं का विस्तार किया। परन्तु महीपाल प्रथम की शक्ति को एक बड़ी क्षति 1021-1023 ई. में हुए चोल-आक्रमणों ने पहुँचाई। चोल-शासक राजेन्द्र चोल के एक सेनापति ने बंगाल पर आक्रमण किया और उसे परास्त कर दिया। चोल स्वयं तो अधिक समय बंगाल में न रह सके परन्तु उन्होंने महीपाल प्रथम के कुछ अधीनस्थ सामन्तों को विद्रोह करने तथा 1026 ई. के निकट गांगेयदेव कलचुरि को बंगाल पर आक्रमण करने के लिए प्रोत्साहित किया जिसके परिणामस्वरूप महीपाल को अपने राज्य का कुछ भाग खोना पड़ा। परन्तु इन असफलताओं के बावजूद भी महीपाल बंगाल और बिहार के पर्याप्त बड़े भाग को अपने अधिकार में रखकर पाल-वंश की शक्ति को पुनः स्थापित करने में सफल हुआ। एक लम्बे समय के अन्तराल के बाद पाल वंश की सत्ता पुनः स्थापित करने के कारण इसे पाल वंश का दूसरा संस्थापक भी माना गया है। महीपाल ने बंगाल में कई नगरों और तालाबों का निर्माण कराया। उसने सारनाथ, नालन्दा और बनारस के अनेक बौद्ध-विहारों को धन दिया तथा नवीन विहारों का निर्माण कराया।

महीपाल का उत्तराधिकारी उसका पुत्र **नयपाल** हुआ जिसने 1038-1054 ई. तक राज्य किया। नयपाल के समय की एक मुख्य घटना कलचुरि-वंश से युद्ध है। यह युद्ध इतनी भीषणता से लड़ा गया कि अन्त में तत्कालीन बौद्ध विद्वान् दीपांकर सृजनन को उसमें हस्तक्षेप करना पड़ा और दोनों में सन्धि हो गयी जिसके द्वारा दोनों ने जीते हुए प्रदेश एक-दूसरे को वापस कर दिये। नयपाल के पश्चात् **विग्रहपाल तृतीय** (1054-1070 ई.) शासक हुआ। विग्रहपाल तृतीय के समय में बंगाल पर पुनः आक्रमण हुए। कलचुरि-शासक कर्ण ने नयपाल के समय में हुई सन्धि को ठुकराकर बंगाल पर आक्रमण किया और पश्चिमी बंगाल की सीमाओं तक पहुँच गया। परन्तु अन्त में दोनों में सन्धि हो गयी और कर्ण ने अपनी पुत्री का विवाह विग्रहपाल तृतीय से कर दिया। इसके पश्चात् चालुक्य-शासक विक्रमादित्य षष्ठ और उसके पश्चात् कौसल के शासक ययाति ने बंगाल पर आक्रमण किया। इन आक्रमणों के कारण विग्रहपाल तृतीय की शक्ति को बहुत धक्का लगा और पूर्वी बंगाल तथा अन्य भागों में स्वतन्त्र राज्य स्थापित हो गये। बिग्रहपाल तृतीय बड़ी कठिनाई से गौड़ और मगध पर अपना शासन कायम रख सका।

1070 ई. में विग्रहपाल तृतीय का पुत्र **महीपाल द्वितीय** शासक हुआ। परन्तु महीपाल द्वितीय अयोग्य सिद्ध हुआ। उसके सामन्तों ने उसके विरुद्ध विद्रोह किया और उन्हीं में से एक दिव्य अथवा दिवोक ने उत्तरी बंगाल (बरेन्द्र) में एक स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया। महीपाल द्वितीय मारा गया और बंगाल के अन्य भागों में भी स्वतन्त्र राज्य स्थापित हो गये।

महीपाल द्वितीय ने शूरपाल और रामपाल नामक अपने दो भाइयों को कैद में डाल दिया था। वे दोनों भाई अव्यवस्था के अवसर पर मगध भाग गये और शूरपाल ने कुछ समय मगध पर अपना शासन किया। शूरपाल की मृत्यु के पश्चात् रामपाल ने मगध पर शासन किया और पुनः पाल-वंश की प्रतिष्ठा को स्थापित किया तथा बंगाल पर अधिकार किया। रामपाल ने उत्तरी बंगाल के शासक और दिव्य के वंशज भीम को परास्त करके उत्तरी बंगाल को पुनः विजय किया तथा उसके पश्चात् सम्पूर्ण बंगाल को जीत लिया। रामपाल ने असम के शासक को परास्त करके उसे अपनी अधीनता में ले लिया। उसने उड़ीसा के आन्तरिक झगड़ों में भाग लेकर उड़ीसा में कलिंग राज्य के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकने का प्रयत्न किया। उसने कन्नौज के शासक गोविन्दचन्द्र से विवाह-सम्बन्ध स्थापित किये और शक्ति-प्रदर्शन द्वारा उसको आगे बढ़ने से रोके रखा तथा पश्चिमी बंगाल के सेन-शासक और उत्तरी बिहार

के शासक नन्यदेव के प्रभाव को बढ़ने से रोका। **रामपाल** पाल-वंश का अन्तिम योग्य शासक था जिसने मगध को आधार बनाकर बंगाल में पुन: पाल-वंश की शक्ति को स्थापित किया। 1120 ई. में रामपाल की मृत्यु हो गयी और उसके पश्चात् पाल-वंश का पतन आरम्भ हो गया।

पाल-वंश का पतन (1120–1155 ई.)

रामपाल के पश्चात् क्रमशः कुमारपाल, गोपाल तृतीय और मदनपाल ने शासन किया। उनका कुल समय 30 वर्ष का रहा। उनके समय में आन्तरिक संघर्षों, सामन्तों के विद्रोहों और विदेशी आक्रमणों ने पाल-वंश को नष्ट कर दिया। कुमारपाल के समय में कामरूप (असम) में विद्रोह हुआ। कुमारपाल ने अपने मन्त्री वैद्यदेव को उसे दबाने के लिए भेजा। वैद्यदेव ने विद्रोह को तो दबा दिया परन्तु कामरूप में अपने स्वतन्त्र राज्य की स्थापना कर ली। उसी प्रकार, पूर्वी बंगाल के अधीन सामन्त भोजवर्मा ने अपने को स्वतन्त्र शासक बना लिया। उसी समय पाल-शासकों पर अन्य शासकों ने आक्रमण किये। कलिंग के शासक अनन्तवर्मा ने उड़ीसा पर अधिकार करके बंगाल में हुगली तक आक्रमण किये और कन्नौज के शासक गोविन्दचन्द्र ने पटना पर अधिकार कर लिया। परन्तु पाल-वंश के मुख्य शत्रु सेन और नन्य-शासक सिद्ध हुए। विजयसेन ने मदनपाल से गौड़ को छीन लिया और गांगेयदेव ने उससे उत्तरी बिहार छीन लिया जिसके कारण पाल-वंश के अन्तिम शासक मदनपाल की शक्ति केवल मध्य-बिहार तक सीमित रह गयी। मदनपाल के उत्तराधिकारियों के बारे में कुछ पता नहीं लगता। 12वीं सदी के मध्य तक पाल-वंश समाप्त हो गया और उसके अन्तिम शासक मदनपाल की मृत्यु एक साधारण सामन्त के रूप में हुई।

पाल-वंश का महत्व

पाल-शासकों ने बंगाल में एक समृद्धशाली राज्य की स्थापना की और लगभग 400 वर्ष तक (विशेषकर उत्तरी भारत की राजनीति में) बंगाल के महत्व को स्थापित रखा। इसके अतिरिक्त, पाल-शासक बौद्ध धर्म, साहित्य और ललित-कलाओं के संरक्षक थे। उन्होंने बौद्ध धर्म के प्रसार और तान्त्रिक बौद्ध सम्प्रदाय के निर्माण में भाग लिया, बंगाली भाषा और साहित्य के निर्माण में सहयोग दिया, ऐसी चित्रकला, मूर्तिकला और स्थापत्य-कला का विकास किया जो दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों की कला को प्रभावित कर सकी, अनेक बौद्ध-विहारों एवं मठों का निर्माण किया, विक्रमशिला के विद्यापीठ की स्थापना की और नालन्दा विश्वविद्यालय की प्रगति में सहयोग दिया। 1203 ई. में मुस्लिम आक्रान्ता बख्तियार खिलजी ने इस राजवंश को ध्वस्त कर दिया।